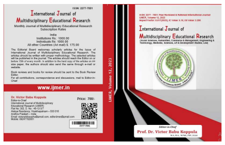
Cover Page

DOI: http://ijmer.in.doi./2023/12.04.84
www.ijmer.in

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY EDUCATIONAL RESEARCH
ISSN:2277-7881; IMPACT FACTOR :8.017(2023); IC VALUE:5.16; ISI VALUE:2.286
Peer Reviewed and Refereed Journal: VOLUME:12, ISSUE:4(5), April: 2023
Online Copy of Article Publication Available (2023 Issues)
Scopus Review ID: A2B96D3ACF3FEA2A
Article Received: 2nd April 2023
Publication Date:10th May 2023
Publisher: Sucharitha Publication, India
Digital Certificate of Publication: www.ijmer.in/pdf/e-CertificateofPublication-IJMER.pdf

प्राचीन भारत में स्त्रियों के सम्पत्तिक अधिकार : एक विश्लेषण

अमृता जौनसन

शोधार्थी, हीरालाल रामनिवास स्नाकोत्तर महाविद्यालय,

सन्त कबीर नगर, उत्तर प्रदेश

सारांश/संक्षेपिका

किसी सभ्यता की आत्मा को समझने तथा उसकी उपलब्धियों एवं श्रेष्ठता का मूल्यांकन करने का सर्वोत्तम आधार उसमें स्त्रियों की स्थिति व उसको प्राप्त अधिकारों का अध्ययन करना है । प्राचीन भारत में स्त्रियों के साम्पत्तिक सम्बन्धी अधिकारों के विषय में गम्भीरता पूर्वक विचार किया गया है और पर्याप्त सीमा तक इस अधिकार को स्वीकार भी किया गया है किन्तु पित्तसत्तात्मक समाज में यह अधिकार अत्यन्त सीमित रहे हैं । प्रस्तुत शोध आलेख में स्त्री की स्थिति के सन्दर्भ में इतिहास में व्याप्त तथ्यों का विश्लेषण कर उसके साम्पत्तिक अधिकारों का विवेचन समीक्षात्मक रुप में किया गया है तथा सम्पूर्ण विवरण को विभिन्न काल खण्डों में बांटकर उसका उल्लेख क्रमानुसार किया गया है ।

मुख्य शब्द

स्त्रीधन, साम्पत्तिक अधिकार, स्त्रियों के आर्थिक अधिकार, स्त्रियों के साम्पत्तिक अधिकार ।

प्राचीन भारतीय समाज में स्त्रियों के आर्थिक, सामाजिक व धार्मिक अधिकारों का स्वरुप काल क्रमानुसार परिवर्तित होता रहा है । वैदिक काल से लेकर पूर्वमध्यकाल तक स्त्रियों की स्थिति सतत् परिवर्तनशील रही है । स्त्रियों को प्राप्त अधिकारों में आर्थिक अधिकार ही वह महत्वपूर्ण वैधानिक अधिकार था जिसके माध्यम से स्त्रियॉ अपने पारिवारिक दायित्वों की पूर्ति कर अपना अलग अस्तित्व स्थापित कर सकती थी । साम्पत्तिक अधिकारों के परिप्रेक्ष्य में प्राचीन भारतीय ग्रन्थों तथा लेखकों के विभिन्न विचार प्राप्त हुए हैं ।

पत्नी के रुप में स्त्रियों की आर्थिक स्थिति

वैदिक काल में सत्रियों को पत्नी के रुप में कुछ सीमा तक साम्पत्तिक अधिकार प्राप्त थे । आपस्तम्ब के अनुसार पति की अनुपथिस्थिति में पत्नी को गृहस्थ धर्म से सम्बद्ध समस्त व्ययों को करने का अधिकार है [1]। उल्लेखनीय है कि पुत्रहीन तथा विधवा होने के पश्चात पत्नी को इस युग में दायाद माना गया था [2]। । ऋृगवेद में स्त्रियों की सामाजिक साम्पत्तिक अधिकार को स्वीकार करते हुए हुए यास्क ने निरुक्त में कहा है कि दक्षिण में स्त्री अपुत्रीवती और विधवा होने पर सभास्थान में जाती हैं, वहां मंच पर आरुढ़ होती है, सभा के व्यक्ति उस पर पॉसे फेकते हैं और वह उत्तराधिकार की सम्पति प्राप्त करती है [3]।

पत्नी को परिणाहय अर्थात् घर की वस्तुओं की स्वामिनी स्वीकार किया गया है । शतपथ ब्राम्हण भी पत्नी को दाय की उत्तराधिकारिणी होने की पुष्टि करता है[4] किन्तु उत्तर वैदिक

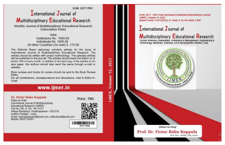

काल में जब याकि कर्मकाण्ड में पवित्रता का विचार बढ़ा तब से उससे स्त्रियों की धार्मिक स्थिति को आघात पहुॅचा परिणामस्वरुप स्त्रियों के साम्पत्तिक अधिकारों का ह्रास हुआ । यज्ञाधिकार के साथ–साथ दयाधिकार से भी स्त्रियों को पूर्णतया वंचित किया गया है [5]। तैतरिय संहिता में उल्लेख है कि यज्ञ में नारियों द्वारा दिया गया सांमनिर्विय (निरिन्द्रय) हो जाता है । अतः नारियों को निरिन्द्रय तथा दाय को ग्रहण न करने वाली अर्थात अदायद माना गया है [6]। मैत्रायणी संहिता के एक मन्त्र में भी स्त्रियों को सम्पति के अधिकार से वंचित करने की बात स्वीकार की गयी है किन्तु अथर्वेद में उल्लेख किया गया है कि कृषि की उपज के 16 भागों में से 4 भाग पत्नी का होता है । उसी ग्रन्थ में अन्यत्र विधवा स्त्री को साम्पत्तिक स्वत्व देने का निर्देश दिया गया है [7]। । कर्मकाण्ड के प्रधान ग्रन्थ मीमांसा दर्शन में जैमिनी ने स्त्रियों के साम्पत्तिक अधिकारों का समर्थन किया है तो दूसरी ओर बौद्धायन तथा परवर्ती धर्मशास्त्रकारों ने स्त्री के साम्पत्तिक अधिकारों का विरोध किया है [8]।

महाकाव्य युग में स्त्रियॉ साम्पत्तिक अधिकारों की दृष्टि से स्वतन्त्र नही थी । महाभारत में उल्लेख मिलता है कि पति–पत्नी को अपनी चल सम्पति समझता था, इसलिए उसे जुए में दाव पर लगा देता था । इस युग में स्त्रियों को जो भी सम्पति प्रदान की गयी वह उनके जीवन निर्वाह के लिए ही उन्हें प्रदान की गयी थी । महाभारत के अनुसार पुत्रों में सम्पति का विभाजन करने के बाद स्त्री को तीन हजार मुद्रा प्रदान करनी चाहिए जिससे वे अपना भरण–पोषण कर सके [9]।

बौद्ध युग में पति विहिन स्त्रियों को जो पुत्रवती होती थी उन्हें पति की सम्पति के उपभोग का पूर्ण अधिकार होता था किन्तु पुत्रहीन स्त्रियों के साम्पत्तिक अधिकारों का हनन हुआ [10]। थेरीगाथा के अनुसार चन्द्रा नामक एक गरीब ब्राम्हणी ने अपने पति की मृत्यु के पश्चात पुत्री के साथ भिक्षा मांगते हुए अत्यन्त दुःखी जीवन व्यतीत किया, साथ ही पट्टाचारा ने अपने पति एवं पुत्रों की मृत्यु के प्श्चात तथा माता–पिता के अभाव में अत्यन्त कष्टमय जीवन बिताया था [11]। अतः बौद्ध युग में स्त्रियॉ स्वतन्त्र रुप से सम्पत्ति की अधिकारिणी नही थी ।

मौर्य युग में केवल वही स्त्रियॉ सम्पत्ति की अधिकारिणी हुई जो पति के न रहने पर धर्मपूर्वक जीवन यापन करती थी । कौटिल्य के मतानुसार स्वेच्छा से पुनर्विवाह करने वाली स्त्रियों को साम्पत्तिक अधिकार के योग्य नही समझा जाता था । इस युग में पत्नी की स्वंय कोई सम्पति नही होती थी । माता–पिता के घर से मिली सम्पति उसकी होती थी जिसका वह आपत्तिकाल में ही प्रयोग कर सकती थी उसे भी नियन्त्रण एवं सीमित कर दिया गया था । इस प्रकार स्त्री इस काल में पूरी तरह से आर्थिक रुप में पति के ऊपर निर्भर थी किन्तु मौर्य कालीन अभिलेख राज परिवार की रानियों की व्यक्तिगत सम्पति का उल्लेख करते है जिन्हें वह स्वतन्त्रतापूर्वक दान कर सकती थी [12]। तथा उनके द्वारा अनेक लोकहित के कार्य सम्पन्न करती थी । इस युग में कुछ स्त्रियॉ राज्य में गुप्तचर तथा निरीक्षक का कार्य करके सम्पति को अर्जित करती थी जिन पर उनका स्वतन्त्र एकाधिकार होता था [13]। सातवाहन युगीन अभिलेखों से भी पत्नी के अधिकारों की पुष्टि होती है।

गुप्तकाल में पत्नी की सामाजिक स्थिति अति उत्तम थी । इसके साथ ही उसे पैतृक सम्पति पर भी अधिकार प्राप्त था । उक्त काल में स्मृतिकार याज्ञवल्क्य, बृहस्पति और विष्णु ने

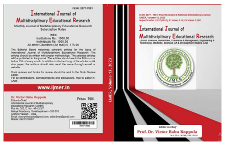

स्त्री के साम्पत्तिक अधिकारों का प्रबल समर्थन किया है । समुद्रगुप्त के एरण अभिलेख से भी समुद्रगुप्त की पत्नी के स्त्रीधन का उल्लेख मिलता [14]। अतः इस काल में स्त्रियों के व्यक्तिगत सम्पति को तो स्वीकार किया गया है किन्तु उसे पारिवारिक सम्पति पर अधिकार प्राप्त न हुआ । याज्ञवल्क्य ने पति की मृत्यु के पश्चात एवं पुत्र के रहने पर भी सभी वर्णों की विधवा को सीधे दायाद माना है बृहस्पति ने पुत्र के अभाव में पत्नि को सीधे दायाद माना है तथा चल सम्पति पर पूरा अधिकार प्रदान किया है परन्तु वे पथभ्रष्ठ स्त्री को पति की सम्पति में केवल भरण–पोषण का अधिकार देते हैं । विदेशी इतिहासकार अलबरुनी ने विधवा स्त्री के विषय में उल्लेख किया है कि उन्हें केवल भरण–पोषण के लिए ही कुछ सम्पत्ति प्रदान की जाती थी किन्तु पी0वी0 काणे एवं मजमुदार जैसे विद्वानों का मत है कि 10वीं से 12वीं सदी तक पुत्रहीन व्यक्ति की सम्पत्ति पर विधवा का अधिकार स्वीकार कर लिया गया था [15]।

कन्याओं के साम्पत्तिक अधिकार

वैदिक काल में कन्याओं को पर्याप्त प्रतिष्ठा थी किन्तु साम्पत्तिक उत्तराधिकार के क्षेत्र में उनकी गणना सामान्य दायाधिकारों में नही की जाती थी । ऋग्वेद के अनुसार औरस पुत्र के होने पर कन्या को पैतृक सम्पत्ति में उत्तराधिकार नही प्राप्त होता था । उक्त काल में कन्याओं का पैतृक सम्पत्ति में उत्तराधिकार नही देने का कारण पिण्डदान था जो पुत्र द्वारा ही सम्पन्न हो सकता था किन्तु अभ्रातृका कन्या का पिता कन्या को अपना पुत्र बना लेता था और दौहित्र को अपना पौत्र मान लेता था । इसी युग में कतिपय कन्याएं अपने पिता के घर आजीवन अविवाहित रहकर उच्चशिक्षा प्राप्त करती थी। ऐसी कन्याओं को दायाद माना गया।

सूत्र युग में गौतम ने कन्याओं को दयादों में सम्मिलित नही किया लेकिन अविवाहित एवं निर्धन कन्याओं के प्रति उदारता दिखाते हुए माता के स्त्रीधन पर उनके अधिकारों का प्रतिपादन किया है ।

महाकाव्य युग में कन्याओं की प्रतिष्ठा में वृद्धि होने से उनके साम्पत्तिक अधिकारों का भी विकास हुआ । इसकी पुष्टि करते हुए महाभारत में कहा गया है कि भ्रात विहीन कन्या को पूरी सम्पति न सही आधी सम्पत्ति अवश्य मिलनी चाहिए । इसी प्रसंग में घेरीगाथा में भी कहा गया है कि सुन्दरी नामक कन्या को उसकी माता ने भ्रातविहिन व पिता के भिक्षु होने के कारण भिक्षुक बनने से रोका था क्योंकि वह पिता के सम्पूर्ण सम्पत्ति की उत्तराधिकारी थी [17]।

मौर्योत्तर काल में कन्या को पैतृक सम्पत्ति का हिस्सेदार माना गया है । मनु ने कन्याओं के साम्पत्तिक स्वत्व को इतना अधिक महत्व दिया कि कन्या के साथ–साथ उसकी पुत्री को भी पैतृक सम्पत्ति में अधिकार प्रदान किया तथा माता की सम्पति का भी कुछ अंश उसे प्रीतिपूर्वक देने की चर्चा की है [18]।

नारद व कात्यायन कन्या के अविवाहित रहने तक ही उसके साम्पत्तिक उत्तराधिकार का समर्थन करते हैं ।

गुप्त युग के सारे स्मृतिकार कन्याओं के साम्पत्तिक उत्तराधिकार के प्रति सचेत थे । गुप्तोत्तर युग में कन्याओं का यह साम्पत्तिक अधिकार और भी विस्तृत हो गया ।

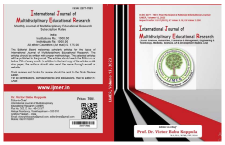

विज्ञानेश्वर ने पैतृक सम्पत्ति में कन्याओं के अधिकार को महत्वपूर्ण मानते हुए चतुर्थांश पर उसका पूर्ण स्वत्व माना है किन्तु जीतूमहावन का विचार था कि पैतृक सम्पत्ति के कम होने पर ही पुत्रों को अपने–अपने भाग का चौथा अंश देना चाहिए । इस प्रकार वस्तुतः कन्या का पैतृक सम्पति में अधिकार केवल उनके वैवाहिक धन तक ही सीमित था ।

स्त्रीधन सम्बन्धी साम्पत्तिक अधिकार

वैदिक काल में विवाह के समय प्राप्त धन को ही स्त्रीधन कहा गया है । इस काल में विवाह के अवसर पर प्रेमपूर्वक पिता एवं भाई द्वारा उपहार स्वरुप धन स्त्री को प्रदान किया जाता था । काक्षीवान नामक स्त्री को उसके विवाह में स्वर्णाभूषण के अतिरिक्त रथ और घोड़े भी प्राप्त हुए थे [19]।

माता–पिता कन्या को दहेज के रुप में वह सभी वस्तुएं प्रदान करते थे जो उसे गृहस्थी के लिए आवश्यक होती थी ।

उत्तरवैदिक काल में भी यह अधिकार पूर्ववत बना रहा । विवाह के अवसर पर स्त्रियॉं इस काल में पिता से स्त्रीधन के रुप में अतुल धन सम्पत्ति प्राप्त करती थी । अथर्ववेद में त्वष्टा द्वारा अपनी पुत्री के लिए दहेज एकत्रित करने का वर्णन प्राप्त हुआ है[20] । स्त्रीधन पर स्त्रियों के अधिकार को और स्पष्ट करने के लिए अथर्ववेद के पुर्नविवाह से सम्बन्धित उस मन्त्र का आश्रय लिया जा सकता है जिसमें स्त्री को पुनः पुत्र–पौत्र एवं धन धान्य प्राप्त करने का आशीर्वाद दिया गया है ।

धर्मसूत्रकार, वशिष्ठ, आपस्तम्ब व बौधायन ने पति द्वारा पत्नी को उपहार स्वरुप प्रदान किये गये धन, विवाह के समय मिलें धन, भेंटों एवं अलंकार आदि को स्त्रीधन के अर्न्तगत सम्मिलित करते हुए इस पर स्त्री के अधिकारों की घोषणा की है ।

महाकाव्य युग में भी स्त्री को स्त्रीधन की अधिकारिणी बताया गया है । महाभारत के अनुसार स्त्री का पति उसे स्त्रीधन के रुप में तीन सहस्त्र मुद्रा प्रदान करता था, जिसका उपयोग वह अपनी आजीविका चलाने के लिए करती थी । किन्तु वह उसे अपनी इच्छानुसार खर्च नही कर सकती थी [21]।

बौद्धयुग में स्त्रीधन का उल्लेख स्त्री की पृथक सम्पत्ति के रुप में हुआ है । एक जातक में दरेनिदान की सुमेध कथा का वर्णन है, जिसमें सुमेध पण्डित का कोषाध्यक्ष सुमेध की माता के धन का अलग विवरण देता है [22]। थेरीगाथा से विदित होता है कि धर्मदिन्ना की अपनी एक पृथकसम्पत्ति थी, जिसके लिए उसके पति ने यह कहा था कि वह अपने माता–पिता के घर जितना भी धन ले जाना चाहे ले जाये [23]। अतः इस युग में स्त्रीधन का अत्यन्त विकसित स्वरुप दृष्टिगोचर होता है ।

मौर्य युग में स्त्रीधन के स्वरुप का अधिक विकास हुआ । कौटिल्य ने वृत्ति और आबन्ध नामक दो प्रकार के स्त्रीधन का उल्लेख किया है । पति की मृत्यु के बाद धर्मपूर्वक जीवन बिताने वाली स्त्री इस स्त्रीधन को प्राप्त कर धर्मपूर्वक अपना जीवन यापन करती थी किन्तु इस स्त्रीधन का उपयोग वे स्वतन्त्रतापूर्वक करें यह कौटिल्य को मान्य नही था । अतः उन्होंने विधवा

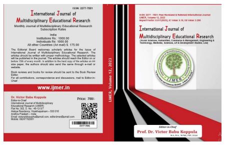
Cover Page

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY EDUCATIONAL RESEARCH
ISSN:2277-7881; IMPACT FACTOR :8.017(2023); IC VALUE:5.16; ISI VALUE:2.286
Peer Reviewed and Refereed Journal: VOLUME:12, ISSUE:4(5), April: 2023
Online Copy of Article Publication Available (2023 Issues)
Scopus Review ID: A2B96D3ACF3FEA2A
Article Received: 2nd April 2023
Publication Date:10th May 2023
Publisher: Sucharitha Publication, India
Digital Certificate of Publication: www.ijmer.in/pdf/e-CertificateofPublication-IJMER.pdf

DOI: http://ijmer.in.doi./2023/12.04.84
www.ijmer.in

को यह निर्देश दिया कि वे गुरु के संरक्षण में रहकर आजीवन इस स्त्रीधन का उपभोग करे [24]। कौटिल्य ने पुनर्विवाह करने वाली स्त्रियों पर विभिन्न प्रतिबन्ध लगाये । अतः कौटिल्य ने स्त्रियों को स्त्रीधन पर अधिकार तो दिये किन्तु स्वतन्त्रता पूर्वक इसके उपभोग पर उन्होंने कुछ प्रतिबन्ध भी लगाये ।

मनु, नारद, याज्ञवल्क्य, विष्णु, कात्यायन ने छः प्रकार के स्त्रीधनों का वर्णन करते हुए उस पर स्त्री के अधिकार को स्पष्ट किया है ।

गुप्त काल में इस स्त्रीधन पर स्त्री का इतना अधिकार होता था कि परिवार के अन्य सदस्य इसका बंटवारा नही कर सकते थे ।

स्त्रीधन का एक स्वरुप यौतिक भी है जिसका सर्वप्रथम उल्लेख मनु ने किया है । यौतिक की व्याख्या करते हुए मनुस्मृति के टीकाकार मेघातिथि ने लिखा है कि यह स्त्री की पृथक सम्पत्ति है तथा इस पर उसका पूरा स्वत्व होता है [25]। दायभाग के अनुसार विवाह के समय पति और पत्नी दोंनो को एक साथ मिला हुआ धन यौतक है [26]। अपरार्क व स्मृति चन्द्रिका भी यौतक की व्याख्या करता है । अतः स्पष्ट होता है कि गुप्तोत्तर काल के शास्त्रकारों ने स्त्रीधन को विस्तृत करके स्त्रियों की वैधानिक स्थिति मजबूत की है ।

निष्कर्ष

उपर्युक्त साक्ष्यों के अनुशीलन से यह भाव अभिव्यंजित होता है कि प्राचीन भारतीय स्त्रियों के साम्पत्तिक अधिकारों को परिवर्तित, विकसित एवं विघटित करने में वैदिक युग से लेकर पूर्वमध्यकाल की सामाजिक परिस्थितियॉ, धर्मसूत्रकारों के विचार तथा तत्कालीन सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक एवं अन्य तत्वों की प्रमुख भूमिका रही है । उल्लेखनीय है कि स्त्रियों के साम्पत्तिक अधिकारों का क्रमिक विकास हुआ है । पुत्री, पत्नी, माता तथा विधवा के रुप में साम्पत्तिक अधिकारों की दृष्टि से उसकी स्थितियों में अन्तर रहा है । हिन्दू समाज में साम्पत्तिक अधिकार नारी की सामाजिक और आर्थिक दशा की ओर इंगित करता है जो उसकी विभिन्न अवस्थाओं से आबद्ध है । यह सही है कि स्त्री के अधिकारों को लेकर धर्मशास्त्रकारों में मतभेद रहा है । परिणामस्वरुप उनके दो वर्ग बन गये एक उदार और दूसरा अनुदार । अनेक उदारचेता व्यवस्थाकारों ने नारी को पुरुषों के समान अधिकार प्रदान करते हुए उसके साम्प्तिक अधिकारों को स्वीकार किया है तथा किसी न किसी रुप में कन्याओं को पैतृक सम्पत्ति का दायादी अवश्य माना है । यद्यपि स्त्रियों को परिवार एवं समाज की प्रतिष्ठा एवं मर्यादा माना गया है । तथा इस मर्यादा की रक्षा के लिए पित्तसत्तात्मक समाज ने स्त्रियों पर कड़े नियन्त्रण लगाये । महाकाव्यकाल व मौर्ययुग में स्त्रियों को स्त्रीधन तो प्रदान किया गया परन्तु स्वतन्त्रतापूर्वक इसके उपभोग पर प्रतिबन्ध भी लगाये । उन्हें पुरुषों की निगरानी में रखा गया । आलोच्यकाल में कन्याओं को सम्पत्ति का अधिकारी माना गया परन्तु यह अधिकार पुत्र की उसी परिस्थिति में दिया जाता था जबकि पुत्र न हो ।

वैदिक काल से मनु एवं याज्ञवल्क्य के काल तक स्त्री जीवन के शैक्षिक, धार्मिक तथा सार्वजनिक क्षेत्रों में क्रमशः गिरावट आयी वहीं आर्थिक क्षेत्र में अपेक्षाकृत प्रगति हुई । बौद्धकाल में सुमेध कथा व धर्मदिन्ना की सम्पत्ति इस युग में स्त्रीधन के अत्यन्त विकसित स्वरुप को

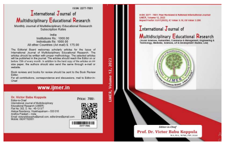

उजागर करती हैं किन्तु सामाजिक चिन्तक व व्यवस्थाकारों द्वारा स्त्रियों की श्रेष्ठ सामाजिक स्थिति का उल्लेख किसी काल विशेष में किसी वर्ग विशेष की स्त्रियों की उच्च स्थिति की झलक को अपवाद के रुप में ही स्वीकार किया जा सकता है ।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची:

1. अर्थशास्त्र 3/5/9–10
2. ऋग्वेद 7/4/8
3. वही 1/24/7
4. शतपथ ब्राम्हण 14/7/3/1–2, डा0 उर्मिला प्रकाश मिश्र, प्राचीन भारत में नारी पृ 29
5. हरिदत्त वेदालंकार, हिन्दू परिवार मिमांशा, बंगाल हिन्दी मंजुल, पृ0 443–447
6. तैतरीय संहिता 6/5/2, डॉ0 लता सिंहल, भारतीय संस्कृति में नारी पृ0 197
7. अथर्वेद 18/2 द्रष्टब्य
8. डी0 एन0 पोजिशन ऑफ वुमेन इन हिन्दू ला, पृ0 448
9. महाभारत 47/23–24
10. दीर्घ निकाय 2/246
11. थेरीगाथा 10/1/2/9–20
12. अशोक का चौथा शिलालेख
13. बी0एन0 लुणिया : प्राचीन भारतीय संस्कृति पृ0 746
14. फ्लीट : भारतीय अभिलेख संग्रह भाग 3, सं0 22,समुद्रगुप्त का एरण प्रस्तर अभिलेख पृ0 25–26

15 काणे पी0बी0 धर्मशास्त्र का इतिहास भाग– 3, पृ0 701–12
16 महाभारत 13/88/82
17 थेरीगाथा, 327
18 मनुस्मृति 9/128, 9/193
19 ऋग्वेद 1/126/1–3
20 अथर्वेद 3/31/5
21 महाभारत अनु0 ᒐ 47/23 व 47/24
22 जातक पृ0 2
23 थेरीगाथा 12
24 अर्थशास्त्र 3/2
25 मेधा, मनु 9/31 पर टीका

यौतक शब्द :पृथग्भावेन च स्त्रीधने ।

तत्र हि तस्या एव केवलायाः स्वाम्यम् ।।

26. दायभाग, 82